'अभी पूंजीवाद का संरचनात्मक संकट है '

अनुवाद-डॉ.अमित राय

सहायक प्रोफ़ेसर,महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा

फोन:9422905719

(सामिर अमीन ''सामूहिक साम्राज्यवाद'' के युग में सामाजिक आन्दोलनों के एक प्रतिबद्ध दार्शनिक और समकालीन बुर्जुआजी समय के कट्टर आलोचक थे| अमीन सामाजिक विचारक,प्रचारक और कार्यकर्ता के रूप में अग्रणी रहे हैं| वे कभी भी पूंजीवाद की कार्यप्रणालियों के बारे में सच बोलने से पीछे नहीं हटे,विशेष रूप से उनकी ऊर्जा,आकर्षण और गहरी प्रतिबद्धता ने न केवल अफ्रीका में बल्कि लेटिन अमेरीका,एशिया में भी विकासशील देशों के बौद्धिकों,कार्यकर्ताओं और आन्दोलनों को एक नेटवर्क के रूप में जोड़ने का कार्य किया| यह नेटवर्क उनके लिए एक जैसी समस्याओं का सामना कर रहे इन देशों को एकजुट करना भर नहीं था बल्कि एक वैश्विक संरचना के खिलाफ एक आन्दोलन के निर्माण की जरुरत भी थी जो विकासशील देशों में अभाव और गरीबी के लिए जिम्मेदार थी| अमीन को कट्टर राजनीति,मार्क्सवादी अध्ययन और सामाजिक विज्ञान पर उनकी छाप, नए प्रकार के अंतर्राष्ट्रीयतावाद के निर्माण या वैकल्पिक वैश्वीकरण और वैश्विक साम्राज्यवाद साथ ही यूरोकेंद्रीयतावाद की क्रांतिकारी आलोचना और मानवतावाद की सार्वभौमिक लहर के निर्माण के लिए हमेशा याद किया जाएगा| जिप्सम जॉन और जिथीश पी.एम.द्वारा लिया गए इस साक्षात्कार को उनकी मृत्यु पूर्व फ्रंट लाइन ने मई 2018 के अंकों में दो हिस्सों में प्रकाशित किया था|)

प्रो.सामिर आमिन का साक्षात्कार

सामिर अमीन दुनिया के आज जीवित महानतम कट्टरपंथी चिंतकों में से एक हैं। पिछले पांच दशकों से वह उन लोगों के लिए प्रेरणास्रोत रहे हैं जो वैकल्पिक और बेहतर विश्व का सपना देखते हैं| गहन मौलिकता और सैद्धांतिक नवाचार के मार्क्सवादी विचारक आमीन वर्तमान के पूंजीवाद की 'अप्रचलित' प्रकृति उत्तर दक्षिणी देशों के बीच असमान विभाजन,साम्राज्यवाद का निरंतर संचालन,पूंजीवाद की यथापूर्व स्थिति को,उसकी विचारधाराओं आदि को समझने,उसका विश्लेषण और आलोचना करने के लिए निरंतर हमें बौद्धिक रूप से लैस करते रहे हैं|

अमीन का जन्म 1931 में काहीरा,मिस्र में हुआ था| उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा पेरिस इंस्टिट्यूट ऑफ़ पोलिटिकल साइंस (''साइंस पो'') से पूरी की,उन्होंने ऑरिजन ऑफ़ अंडर डेवलपमेंट-केपिटलिस्ट एकुमुलेशन ऑन ए वर्ल्ड स्केल विषय पर अपनी पीएच-डी पेरिस के सोरबोर्न से प्राप्त की और फ्रांस के राष्ट्रीय सान्खिकी संस्थान और आर्थिक अध्ययन से गणितीय आंकड़ों में डिप्लोमा किया| 1957 से 1960 तक अमीन ने इजिप्ट में योजना एजेंसी में कार्य किया जब तक कि कम्युनिस्टों के गमाल अब्देल नासेर शासन के उत्पीड़न ने उन्हें इजिप्ट छोड़ने पर मजबूर न कर दिया| 1960 से 1963 तक वह माली देश के योजना मंत्रालय से जुड़े रहे| 1966 में फ्रांस में पूर्ण प्रोफ़ेसर होने के बाद,अमीन ने पेरिस- विन्सिनिंस और डकार, सेनेगल में अध्यापन का कार्य चुना, वहां वे 40 वर्षों से ज्यादा रहे| 1980 से वे तीसरे विश्व मंच के निदेशक बने और 1997 से वर्ल्ड फोरम फॉर अल्टरनेटिव्स के निदेशक रहे| दक्षिण में मार्क्सवाद या जिसे 'तीसरी दुनिया' कहा जाता है,अमीन ने पूंजीवाद के अंतर्गत तीसरी दुनिया के देशों में 'विकासशील देशो के विकास' का विश्लेषण करके अपने बौद्धिक अन्वेषणों की शुरुआत की| वह विकास के इस

स्वरूप को पूंजीवाद की विशेषता बताते हैं| अमीन के अनुसार पूंजीवाद के तहत विश्व अर्थव्यवस्था एक पदानुक्रमित,असमान और शोषक की तरह कार्य करती है| जहाँ उत्तर के 'प्रथम विश्व' के देश दक्षिण के तृतीय विश्व के देशों पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर रहे हैं और उन्हें गरीब बनाने की कीमत पर उनका विकास कर रहे हैं|

अमीन के लिए,पूंजीवादी विकास का यह स्वरूप हमेशा उत्तर के देशों को दक्षिण के देशों पर साम्राज्यवादी नियंत्रण की प्रक्रिया का सहारा लेने को आवश्यक बनाता है, अमीन मानते हैं कि "साम्राज्यवाद पूजीवाद का कोई मुकाम नहीं है| यह पूंजीवाद के विस्तार में अंतर्निहित है" और वह समकालीन साम्राज्यवाद को "त्रयों का साम्राज्यवाद" कहते हैं| और तर्क देते हैं कि यह साम्राज्यवाद वैश्विक दक्षिण में लोगों को गरीब और पीड़ित बनाता है| वे इस सैद्धांतिक प्रस्ताव से इस दलील को खारिज करते हैं कि विश्व पटल पर साम्राज्यवाद अब मौन है और जो हमारे पास है वह "साम्राज्य" है|

निर्भरता सिद्धांत के अग्रणी के तौर पर 1970 से अमीन ने दिखाया कि कैसे परिधि के देशों से संसाधनों के प्रवाह ने उत्तर के केंद्रीय देशों को समृद्ध किया है| वह परिधि से अधिशेष को वसूलने को 'साम्राज्यवादी किराया' कहते हैं| वह मानते हैं कि दक्षिण के देशों के साम्राज्यवादी शोषण ने 20वीं सदी में दक्षिण में मुक्ति संघर्ष के उदय के लिए मार्ग प्रशस्त किया, और वह आशा करते हैं कि 21वीं सदी के वित्तीय पूँजी के एकाधिकार में भी यही प्रक्रिया दोहराई जायेगी|

समकालीन युग की वित्तीय पूँजी के एकाधिकार का चरण पहली बार 1970 में पटल पर दिखा| उनके अनुसार यह वित्तीयकरण, पूंजीवाद की संचय करने की और ठहराव की प्रवृत्ति के प्रतिक्रिया के फलस्वरूप आई है| अमीन स्पष्ट करते हैं कि 1971 से वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था दूसरे तरह के दीर्घ संकट में प्रवेश कर चुकी है,संभवतः इससे पूँजीवाद अपने अंत तक पहुँच गया है, उनके अनुसार पूंजीवाद अपने दीर्घ इतिहास में अब तक बड़े संकटों में पड़ा है ; पहला 1871 से 1945 और दूसरा संकट 1971 के बाद शुरू हुआ| यही समय है जिसमें हम रह रहे हैं| दुनिया के लिए उनके निष्कर्ष और चेतावनी है कि "पूँजीवाद एक अप्रचलित व्यवस्था हो चुकी है"|

पूंजीवाद अप्रचलित अवस्था की उस भौतिक और ठोस स्थिति में पहुँच चुका है जहाँ वह मानवता के समक्ष समाजवाद को एक आवश्यक विकल्प की जरुरत के रूप में जीवित रखता है और उसकी मांग करता है| अमीन घोषित करते है कि यदि अंत में हम इस "लंबी सुरंग" से बाहर निकलते हैं,तो वह समाजवाद होगा, एक ऐसा समाज जिसका लक्ष्य "ग्रह के सभी मनुष्यों को उनके सामाजिक विकास का बेहतर स्वामित्व देकर" "पूंजीवाद में अन्तर्निहित असमान विकास की विरासत" के पार जाना होगा|

अमीन विभिन्न विचारों पर लिखी गयीं कई किताबों के लेखक हैं जिनमें राजनीतिक अर्थशास्त्र,समाजवाद,राजनीतिक इस्लाम और संस्कृति शामिल है| 'यूरोसेंट्रीसिज्म' 1988 में प्रकाशित हुई, यह उनका एक अभूतपूर्व कार्य था| "इसमें वे विश्व इतिहास का यूरोप केन्द्रित प्रभुत्व वाली दृष्टि को,जो ग्रीक और रोमन क्लासिक विश्व से ईसाई सामंतवाद और यूरोपीय पूंजीवादी व्यवस्था तक संकीर्ण और गलत तरीकों से प्रगति को रखती है, इस दृष्टि को नकारकर,अमीन पूरी तरह से अरब इस्लामिक विश्व की ऐतिहासिक भूमिका पर बल देकर

पुनर्व्याख्यायित करते हैं|" यूरोकेंद्रीयतावाद आलोचना अध्ययन और विद्वता में एक क्लासिक की तरह बचता है| अमीन की अन्य महत्पूर्ण पुस्तकों में द लिबरल वायरस (2004), द इम्प्लोसन ऑफ़ कन्टेम्पोरेरी केपिटलिज्म (2013) द लॉ ऑफ़ वर्ल्ड वाइड वेल्यू (2010) और एंडिंग द क्राइसिस ऑफ़ केपिटलिज्म ऑर एंडिंग केपिटलिज्म (2010) शामिल हैं|

इस साक्षात्कार में 86 उम्र के अमीन गहनता से व्यापक विषयों पर बात करते हैं | जैसे वैश्वीकरण; सामान्यीकृत एकाधिकार पूँजी; असमानता की चेतावनी देती वृद्धि; नवउदारवादी युग में राज्य की भूमिका; वैश्वीकरण और उससे वियोजन; पूंजीवाद और आधुनिकता; समकालीन पूंजीवादी विश्व में फासीवाद की पुनर्वापसी; वामपंथ का उदय; अंतरराष्ट्रीयतावाद की आवश्यकता; नागरिक समाज आन्दोलन; वर्तमान के क्रांतिकारी संघर्ष; आर्थिक विकास का चीनी मॉडल; अरब विश्व का समकालीन राजनैतिक परिदृश्य; यूरोकेंद्रीयता की आलोचना; निर्भरता का सिद्धांत; मार्क्सवाद की प्रासंगिकता और तृतीय विश्व फोरम |

आप समकालीन वैश्वीकरण को हमारे समय के सामान्यीकृत एकाधिकार पूंजीवाद के हिस्से और खंड की तरह परिभाषित करते है| आप वैश्वीकरण के इतिहास का पता कैसे लगाते हैं ?

वैश्वीकरण कोई नया नहीं है | यह पूंजीवाद का पुराना और महत्वपूर्ण आयाम है | आप भारतीयों को किसी और से बेहतर पता होगा|आपको 18वी सदी की शुरुआत से 20वी सदी के अंत तक विश्व के द्वारा जीता गया है और उपनिवेश रखा गया | वह भी वैश्वीकरण था | वह वैश्वीकरण नहीं जो आप चाहते थे बल्कि आपको वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था से एकीकृत किया गया| उपनिवेशीकरण वैश्वीकरण का एक रूप था, परन्तु भारत के लोगों ने इसके खिलाफ संघर्ष किया और अपनी स्वतंत्रता हासिल की| एक ऐसे नेतृत्व के अंतर्गत जो समाजवादी क्रांतिकारी नेतृत्व नहीं था बल्कि गांधी और नेहरु का लोकप्रिय राष्ट्रीय नेतृत्व था | कांग्रेस पार्टी की स्थापना 19वी सदी के अंत में हुयी,इसने अपने कार्यो को 20वी सदी में विकसित किया जब तक कि 1947 में अपनी स्वतंत्रता नहीं पा ली गयी, किंतु इसकी दो कीमतें चुकानी पड़ी | पहली, भारत का महत्वपूर्ण हिस्सा,जो अब पाकिस्तान और बांग्लादेश कहलाता है,देश का पश्चिमी और पूर्वी हिस्सा भारत से अलग हो गया | वह उपनिवेशवादियों का अपराधी कृत्य था | दूसरा, अपनी स्वतंत्रता हासिल करने के दौरान जो दूसरी चीज हुई वह थी कि यह स्वतंत्रता कांग्रेस पार्टी के नेतृत्व में भारत के बुर्जुआ वर्ग (कई लोकप्रिय सहयोगियों के साथ) द्वारा लड़ी गयी, इसमें मजदूर वर्ग का सहयोग भी शामिल था| 1947 में स्वतंत्रता मिलने के बाद वैश्वीकरण का एक अन्य स्वरूप था,एक ऐसा स्वरूप जिसे मैं संवादी वैश्वीकरण कहता हूँ, जो कि 1955 की बेदुंग कांफ्रेंस के परिणामस्वरूप आया| 1955 में चीन,भारत,इंडोनेशिया और कई संख्या में अन्य राष्ट्रों के प्रतिनिधि पहली बार इंडोनेशिया में मिले | यह समय भारत की स्वतंत्रता के कुछ ही वर्षो बाद का समय था,चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के बीजिंग में दाखिल होने के कुछ वर्षों बाद का समय था और इंडोनेशिया में डचों से अपनी स्वतंत्रता हासिल करने के कुछ वर्षो के बाद का समय भी था | तब हम वैश्वीकरण के एक अन्य स्वरूप के गवाह बने | आज यह कहना फैशन होगा कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद वैश्वीकरण दो ध्रुवीय था, संयुक्त राज्य अमेरिका और USSR के बीच, और यह द्वि-ध्रुवीयता दोनों के बीच तथाकथित शीत युद्ध के साथ थी| यह

मूलतः गलत है | हमारे पास जो वैश्वीकरण द्वितीय विश्व युद्ध के बाद था कहा जाए तो 1945 से 1980 या 1990 तक, वह जिसे मैंने संवादी वैश्वीकरण कहा है,वह था| यह केवल U.S. के USSR के बीच नहीं था बल्कि कई सहयोगियों के बीच था, भागीदारो के कम से कम चार परिवारों के बीच था: पहला परिवार U.S. के साम्राज्यवादी सहयोगियों और पश्चिमी यूरोप और उसके सहयोगियों जापान,आस्ट्रेलिया और कनाडा का था| उस समय दूसरा नायक बेशक सोवियत संघ अपने पूर्वी यूरोप के सहयोगियों के साथ था, तीसरा नायक चीन जो तथाकथित समाजवादी कैंप से होने के बावजूद 1950 से था| उनकी 1950 के बाद से स्पष्ट रूप से स्वतंत्रता एक नीति थी| अन्य सहयोगी वे देश थे जो बैंदुंग में मिले जिन्होंने गुट निरपेक्ष आन्दोलन शुरू किया| इस कैंप में न केवल एशिया के देश थे बल्कि उस समय अफ्रीका के नए स्वतंत्र होने वाले ज्यादातर देश शामिल थे |

पुर्तगाली उपनिवेश और दक्षिण अफ्रीका इसमें बाद में शामिल हुए| क्यूबा लैटिन अमेरिका का एकमात्र देश था जो इसमें शामिल हुआ| मैंने चार परिवारों के शासन के बारे में कहा, भारत की लोकप्रिय राजकीय व्यवस्था,नासेरियन का इजिप्ट,अल्जीरिया और एशिया और अफ्रीका के कुछ देशों के बारे में| इसलिए हमारे पास वैश्वीकरण का एक दूसरा स्वरूप था,जो बहुध्रुवीय वैश्वीकरण था, जिसने भागीदारों के उपर्युक्त चार परिवारों के बीच संवाद किया|

एशिया और अफ्रीका देश के लोगों के दृष्टिकोण से यह वह समय था जब साम्राज्यवाद को भारत और अन्य एशियाई और अफ्रीकी देशों के लोकप्रिय राष्ट्रीय कार्यक्रम को स्वीकारने और उन्हें रियायतें देने पर मजबूर होना पड़ा| दक्षिण के देशों ने वैश्वीकरण की मांग और जरूरतों के साथ सामंजस्य किया,उनकी जगह यही वे साम्राज्यवादी देश थे जिनको हमारी मांगों के साथ सामंजस्य करने को मजबूर होना पड़ा| वह एक तरफ साम्राज्यवादी देशों और दूसरी तरफ समाजवादी ब्लॉक के देशों जिसमें सोवियत संघ और चीन और दक्षिण के ज्यादातर देश थे के बीच संवादी वैश्वीकरण था| उस समय का संवादी वैश्वीकरण जिसे द्वितीय विश्व युद्ध के 30 वर्षो के बाद तक का कहा जा सकता था के तीन स्तंभ थे, पहला पश्चिमी था विशेषकर यूरोपीय और उत्तरी अमेरिका भी और जापानी,उनका कल्याणकारी राज्य का स्वरूप था जो मजदूर वर्ग की जीत के परिणामस्वरूप था,खासकर यूरोप में लाल सेना के साथ फासीवाद और नाजीवाद को हराने में मजदूर वर्ग की भूमिका महत्वपूर्ण भूमिका थी और इसी जीत का यह परिणाम था|

दूसरा समाजवादी अनुभवों की भिन्नता वाले देश थे: सोवियत पैटर्न और चीनी पैटर्न और इसमें हम वियतनाम और क्यूबा के समाजवादी पैटर्न को भी जोड़ सकते हैं| हमारे पास तीसरा स्तम्भ भारत था,नेहरु और नेहरु के बाद की कांग्रेस खासकर इंदिरा गांधी की कांग्रेस के समय वाला भारत था| यह समय नासेर के समय का भी इजिप्ट का भी था और मध्य पूर्व (पश्चिमी एशिया) और अफ्रीका के कई देशों का भी समय था जो तथाकथित समाजवादी बढ़त वाले देश थे| तीनों स्तंभ इसमें से उतरोत्तर बाहर हो गए और अपनी एतिहासिक सीमा पर पहुँच गए और धीरे धीरे वे टूट गए| कुछ टूटन बहुत ही क्रूर थी जैसे 1991 में सोवियत संघ | यह न केवल विभाजित हुआ और 15 गणराज्यों में बिखर गया,ज्यादातर देश यूरोप की ओर चले गए और यूरोपीय संघ और NATO में शामिल हो गए, बल्कि पश्चिम में सामाजिक लोकतंत्र भी हार गया था| मेरा मतलब है कि पूर्व में कम्युनिस्टों की हार,पश्चिम में सामाजिक लोकतंत्र की जीत नहीं थी| वह पश्चिम के सामाजिक लोकतंत्र की हार भी थी,जो सामाजिक उदारवादी हो गए|

पश्चिमी यूरोप में सामाजिक लोकतांत्रिक या समाजवादी शासित और सामान्य पारंपरिक दक्षिणपंथी दल के शासन के बीच कोई अंतर नहीं है| वे सभी सामाजिक उदारवादी हैं| इसका मतलब है कि वे सभी वैश्विक एकाधिकार पूँजी की नीतियों के सहयोगी हैं| तीसरा स्तंभ हमारा स्तंभ भी कई तरह से टूटा, कुछ मामलों में तख्तापलट भी हुआ और कुछ मामलों जैसे भारत जैसे देश दक्षिण की तरफ बढ़ रहे हैं और तथाकथित उदारवादी वैश्वीकरण के स्वरूपों और उनकी नयी शर्तों को स्वीकार कर रहे हैं| वह समय इंदिरा गांधी के नेतृत्व का समय था और ज्यादातर उनके उत्तराधिकारियों का| इसी तरह की स्थिति इजिप्ट के मामले में थी| नासेर की मौत के बाद,अनवर सदत (जो पहले कहे जा सकते थे) ने कहा कि हमारे पास इस बकवास जिसे समाजवाद कहते है के साथ करने के लिए कुछ नहीं था और हम पूंजीवाद में लौटेंगे,हम यू.एस. और अन्य देशों के सहयोगियों के साथ लौटेंगे| माओ की मृत्यु के बाद चीन अलग तरह के रास्ते पर गया, नए तरह के वैश्वीकरण की ओर,किंतु कुछ विशिष्टताओं के साथ| वह न केवल उसकी कम्युनिस्ट पार्टी जो चीन पर अपने शासन को संभाल रही थी की राजनैतिक विशिष्टता थी बल्कि वह आर्थिक-सामाजिक विशिष्टताएं भी थीं जो चीन को भारत से अलग करती थी| चीन और भारत के बीच जो व्यापक अंतर है वह यह कि चीन ने रेडिकल क्रान्ति की;भारत अभी तक इसे नहीं कर सका है|

और इसलिए हमारे पास वैश्वीकरण के विभिन्न स्वरूप थे और यह तीन व्यवस्थाओं की टूट है, पश्चिम में तथाकथित सामाजिक लोकतंत्र की,सोवियत व्यवस्था की और हमारी| इसने साम्राज्यवादी पूंजीवाद को आक्रामक बनाया और वैश्वीकरण के नए स्वरूप को शक्तिपूर्वक लाने की स्थिति उपलब्ध कराई|

नए पैटर्न के वैश्वीकरण की क्या विशेषताएं है | इसकी कार्य प्रणाली क्या है?

यह बढ़ा हुआ आक्रमण न केवल हमारे समाजवादी या वामपंथियों या राष्ट्रवादियों जनवादियों से संबंधित है बल्कि यूरोप यूनाईटेड स्टेट और जापान के साम्राज्यवादी पूंजीवादी देशों में हुए परिवर्तनों से भी संबंधित है| एकाधिकार पूंजीवाद में नया कुछ भी नहीं है| एकाधिकार पूंजीवाद 19वीं सदी के अंत में शुरू हुआ जैसा कि समाजवादी लोकतांत्रिक जैसे जॉन ए होब्सन और रुडोल्फ हिल्फर्डिंग ने विश्लेषित किया| परंतु लेनिन के उस समय के राजनैतिक निकस ने स्पष्ट किया कि एकाधिकार पूंजी का मतलब है पूंजीपतियों का चापलूसी की ओर जाना और इसलिए उनके एजेंडे में अब समाजवादी क्रांति वाले देश थे| वास्तव में,सभी समाजवादी क्रांतियाँ वैश्विक साम्राज्यवादी व्यवस्था की परिधि में ही हुई थीं| अर्ध परिधि वाले देशों,कमजोर कड़ी रूस से शुरू करके तब वास्तविक परिधि वाले देश जैसे वियतनाम और क्यूबा में यह शुरू हुआ,,परन्तु पश्चिम में कुछ भी नहीं हुआ| वहां संयुक्त राज्य में, पश्चिम यूरोप या जापान में एजेंडे में समाजवादी क्रांति नही थी|

एकाधिकार पूँजी के लिहाज से इसमें कुछ भी नया नहीं है और यह कई स्तरों से गुजरा| एकाधिकार पूँजी का प्रथम चरण 19वीं सदी के अंत से द्वितीय विश्व युद्ध तक था; यह लंबा वक्त था,लगभग आधे से अधिक की सदी तक का वक्त| इस काल के दौरान एकाधिकार पूँजी चरित्र में राष्ट्रीय थी| वहां ब्रिटिश साम्राज्यवाद,यूनाइटेड स्टेट साम्राज्यवाद,जर्मन साम्राज्यवाद,जापानी साम्राज्यवाद,फ्रेंच साम्राज्यवाद आदि था| और वे न केवल परिधि को जीत रहे थे दमन कर रहे थे बल्कि आपस में उन्हें लड़ा भी रहे थे| उनके बीच के संघर्षों के कारण दो विश्व युद्ध हुए| जो परिवर्तन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुआ उसने प्रगतिशील रूप से और अचानक 1970 के मध्य में एकाधिकार पूँजी

नए चरण में प्रवेश कर गयी,जिसे मैं सामान्यीकृत एकाधिकार पूँजी का चरण कहूंगा| इसमें दो चीजें घटित हुई| पहली एकाधिकार पूँजी ने सामाजिक उत्पादन के सभी अन्य रूपों को सब कॉन्ट्रैक्ट करने के लिए जमा करने में पर्याप्त सफलता अर्जित की,,इसका मतलब है कि मानवीय क्रियाकलापों से जो मूल्य उत्पादित हुए उसे व्यापक तौर पर एकाधिकार पूंजी ने साम्राज्यवादी किराए के रूप में निगल लिया और यही हमारे देशों में भी हुआ| इस नए वैश्वीकरण में,हमारे देशों को साम्राज्यवाद के उप ठेकेदार के रूप में आमंत्रित किया गया| ऐसा स्पष्ट रूप से भारत के मामले में हुआ| बेंगलुरु शहर के मामले को ही लीजिये,इसे एकाधिकार पूँजी के लिए उप ठेकेदारी के सबसे ज्यादा संभावित क्षेत्र के तौर पर न केवल ब्रिटेन और यूनाईटेड स्टेट द्वारा बल्कि यूरोप और जापान एकाधिकार पूँजी वाले देशों द्वारा भी विक्सित किया गया|

दक्षिण के देशों के लिए वैश्वीकरण ने क्या चुनौतियां रखीं हैं ?

आज हमारे सामने चुनौती विकल्प की ओर देखने और प्रयास करने की हैं| हमें वैश्वीकरण के इस रूप से बाहर निकलना होगा| वैश्वीकरण और अधिक प्रशिक्षित हुआ है| शुरूआती दिनों में वह भारत और अन्य देशों के लिए औपनिवेशिक वैश्वीकरण था| हमारी विजय के बाद, भारत के लोगों की विजय के साथ ही चीन व अन्य देशों की विजय के बाद हमारे पास संवादी वैश्वीकरण था| अब हम तथाकथित उदारवादी वैश्वीकरण की ओर लौट रहे हैं,जो एकपक्षीय रूप से 'जी देशों' के द्वारा तय किया गया है,जिसमें यूनाईटेड स्टेट यूरोप और जापान हैं| हमारे सामने वैश्वीकरण के इस रूप को स्वीकार न करने की चुनौती है| हमारे सामने वैश्वीकरण के सम्मोहन से बचने की चुनौती है| अफ्रीकी देशों के लिए वैश्वीकरण का अर्थ उनके राष्ट्रीय संसाधन तेल,गैस,खनिज और कृषि योग्य भूमि की लूट है| भारत के लिए, इसी तरह लैटिन अमरीका और दक्षिण एशिया के कई अन्य देशों के लिए इसके अन्य रूप हैं| इसमें हमारे सस्ते श्रम से,हमारे देशों में तैयार कीमतों को साम्राज्यवादी व्यवस्था के फायदे के लिए एकाधिकार किराए की तरह हस्तांतरण से लाभ लेना शामिल है|

जॉन बेलेमी फ़ॉस्टर लिखते हैं कि हमारे सामने केवल दो ही विकल्प हैं:समाजवाद या अतिवाद चूंकि पूंजीवाद अब अपने चरमांत पर पहुँच चुका है| आपने लिखा कि पूंजीवाद अप्रचलित हो चुका है| क्या आप यह कह रहे हैं कि पूंजीवाद का अंत क्षितिज पर है? कौन सी चीज पूंजीवाद को एक अप्रचलित सामाजिक व्यवस्था बनाती है?

अभी पूंजीवाद के समक्ष संरचनात्मक संकट है| 1970 के मध्य में पूंजीवादी विकसित केंद्र,यूनाईटेड स्टेट ,यूरोप और जापान की विकास दर जो पिछले 30 वर्षों में थी वह घटकर आधी हो गयी,और जिसे वे कभी भी वापस नहीं पा पायंगे| इसका मतलब यह है कि संकट जारी है और साल दर साल यह और गहराता जा रहा है और यह घोषणा कि हम इस संकट से बाहर आ रहे हैं क्योंकि जर्मनी या अन्य कहीं कहीं यह वृद्धि दर 1.2 से 1.3 तक बढ़ रही है, यह केवल हास्यास्पद है| यह एक व्यवस्थित संकट है| यह L संकट है| एक U-संकट जो सामान्य तरह का पूंजीवादी संकट है,U-संकट का मतलब है ठीक उसी तरह की तार्किकता जिससे आर्थिक मंदी आई थी और छोटे संरचनात्मक परिवर्तनों के द्वारा वृद्धि वापस पाई जा सकती है| एक L-संकट का मतलब है कि आर्थिक मंदी से व्यवस्था बाहर ही नहीं निकल सकती है| इसका मतलब है कि व्यवस्था को ही बदलना पड़ेगा| इसका मतलब यह नहीं है कि छोटे

संरचनात्मक परिवर्तनों की जरुरत है| इसका मतलब यह है कि हम उस बिंदु पर पहुँच चुके हैं जहाँ पूँजीवाद का पतन की ओर जा रहा है| परन्तु पतन एक बहुत ही खतरनाक समय है| क्योंकि जाहिर है कि पूंजीवाद शान्तिपूर्वक अपनी मौत का इंतज़ार नहीं करेगा| यह अपनी स्थिति को बरकरार रखने के लिए केन्द्रों के साम्राज्यवादी वर्चस्व को बनाए रखने के लिए अधिक से अधिक बर्बर होगा| और यही समस्या की जड़ में है| मैं नहीं जानता जो लोगों का मतलब है जब वे कहते हैं कि "युद्धों का खतरा पहले से कहीं अधिक बड़ा है|" उसका क्या अर्थ है| 1991 में सोवियत संघ के टूटने के तत्काल बाद से ईराक युद्ध से इसकी शुरुआत हो गयी|

यूगोस्लाविया के टूटने के साथ ही वहीँ यूरोप में भी युद्ध छिड गए हैं| और अब मेरे विचार से हम देख सकते हैं कि यूरोपीय व्यवस्था स्वयं ही अन्तःस्फुटित होना शुरू हो गयी है और आप इसे केवल कठिन नीतियों के नकारात्मक परिणामों में नहीं देख सकते हैं| बेशक यह न केवल लोगों के लिए नकारात्मक है बल्कि पूंजीवाद के लिए भी नकारात्मक है क्योंकि वे वृद्धि,पूंजीवादी साम्राज्यवादी वृद्धि को वापस नहीं ला रहे हैं वे सभी को वापस नहीं ला रहे हैं| आप धीरे धीरे कई संख्या में राजनैतिक परिणामों को देख सकते हैं जो असली चुनौती को दूर नहीं कर पा रहे हैं जैसे ब्रेक्सिट,आप इसे स्पेन और केटालोनिया में भी देख सकते हैं और इस तरह के परिणाम आप अभी अधिक से अधिक देखेंगे| आप इसे पूर्वी यूरोप की अंधराष्ट्रीय अति प्रतिक्रियावादी सरकार से देख सकते हैं|

इसलिए हम यह विचार नहीं कर सकते कि युद्ध को कैसे रोका जाए क्योंकि युद्ध और परिस्थितियाँ अधिक अराजक हैं और इस खस्ताहाल व्यवस्था के तर्क में ही अन्तर्निहित हैं|

बढ़ती असमानता

नव उदारवादी वैश्वीकरण की सबसे महत्वपूर्ण और चेतावनी वाली परिघटना रही है असमानता में वृद्धि, जैसी इतिहास में पहले कभी वैसी नहीं रही| थॉमस पिकेटी जैसे अर्थशास्त्री और अन्य अर्थशास्त्रियों ने इसके परिमाण का दस्तावेजीकरण किया है| पिकेटी कहते हैं सार्वभौमिक संपत्ति कर या प्रगतिशील टैक्स व्यवस्था की प्रक्रिया से इस असमानता को जांचा जा सकता है| क्या आप सोचते हैं कि पूंजीवाद में यह समाधान संभव है?

ये आंकड़े सही हैं या कम से कम जो भी आंकड़े मिल पाए हैं उनमें ये बेहतर हैं| फिर वर्तमान के लक्षणों के बॉस जो विश्लेषण मिला है वह मान्य तथ्यों (पिछले 50 वर्षों में असमानता तेजी से बढ़ी है) को ही प्रकट कर रहे हैं,वे वास्तविकता को बताने के लिए कमजोर हैं| यह तथ्य कि सभी जगह असमानता बढ़ी है इसकी व्याख्या की जरुरत है| क्या इसका कोई अनूठा कारण है?क्या सभी देशों में बढती असमानता का स्वरूप एक जैसा है और यदि असमानता का स्वरूप अलग अलग है तो ऐसा क्यों है? उदाहरण के लिए (विश्व असमानता) रिपोर्ट (2018,थॉमस पिकेटी,गेब्रियल जुक्में,इमानुएल सेइज,लुकास चांसल और फैकुंडो अल्वरेदो) इस बात से कोई अंतर नहीं करती कि जिसे मैं महत्वपूर्ण मानता हूँ| वह एक ओर बढ़ती असमानता के मामलों के बीच अंतर बताती है, परन्तु यह असमानता पूरी आबादी के लिए आय में वृद्धि के साथ है, दूसरी ओर,असमानता बहुमत की गरीबीकरण के साथ है|

चीन और भारत की तुलना करना इस मायने में बहुत महत्वपूर्ण है| चीन में आय की वृद्धि लगभग पूरी जनसंख्या के लिए वास्तविकता रही है,भले ही वह वृद्धि कुछ लोगों की अधिक है अन्य बहुमत के लोगों की की तुलना में|

इसलिए चीन में बढ़ती असमानता को गरीबी में कमी के साथ ही विकास कियां गया है,ऐसा मामला भारत,ब्राजील और दक्षिण के लगभग सभी देशों के साथ नहीं रहा है| इन देशों में वृद्धि (और कुछ मामलों में उल्लेखनीय रूप से उच्च वृद्धि) से कुछ ही लोगों को (कुछ मामलों में 1 फीसदी लोगों को जैसा इक्वाटोरियल गुयाना में और 20 फीसदी भारत के मामलों में) लाभ हुआ है| परन्तु इस वृद्धि से ऐसे बहुमत को जो बहुत ही गरीबी में जी रहे हैं उनको लाभ नहीं हुआ है| कुछ सूचक इस मायने में सही स्थिति नहीं बयान नहीं कर पा रहे हैं और इस अंतर को दिखाने के लिए ये अपर्याप्त हैं| उदाहरण के लिए गिनी गुणांक| चीन और भारत में एक ही गिनी गुणांक हो सकता है फिर भी एक जैसी स्पष्ट परिघटना का सामाजिक अर्थ (बढ़ती असमानता) बहुत अलग है|

दूसरी बात यह है कि दल की नीतिगत सिफारिशें सीमित हैं और शायद अनुभवहीन भी,प्रगतिशील कराधान का निश्चित रूप से सभी मामलों में स्वागत किया गया है| लेकिन इसके कुछ परिणामों में इसका प्रभाव सीमित है जब तक कि सामान्य आर्थिक नीतियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन को समर्थन नहीं किया जाता| तथाकथित "उदारवादी" नीतियों को जारी रखने के साथ किया गया प्रगतिशील कराधान पूँजी (जो आज एकाधिकार पूँजी है) को मुक्त रूप से संचालित करने की अनुमति देने से बहुत कम परिणाम मिलेंगे| इसके अलावा यह असंभव माना जाता है और इसलिए ऐसे शासकों द्वारा इसे अस्वीकार कर दिया जाएगा जो एकाधिकार पूँजी की सेवा में लगे हुए हैं|

यही न्यूनतम मजदूरी स्थापित करने के सम्बन्ध में कहा जा सकता है| बेशक इसका स्वागत है किन्तु यह सीमित प्रभाव के साथ उपस्थित होगा जब तक कि उदारवादी सामान्य आर्थिक नीति अपनाई जाती रहेगी| तब मजदूरी मुद्रा स्फीति से प्रभावित रहेगी,मजदूरी घटना इसकी वास्तविकता है| यह क़ानून के माध्यम से दी जाने वाली न्यूनतम मजदूरी के विचार को अस्वीकार किये जाने के उदारवादियों द्वारा दिए गए तर्क हैं शिक्षा और स्वास्थ्य तक सभी की समान पहुँच समाज को शासित करने वाली वैध व्यवस्था का लक्ष्य होना चाहिए| इसके अलावा,यह किसी भी गंभीर प्रयास के "उदय" होने के लिए एक पूर्व शर्त है| परंतु इस तरह की व्यवस्था से सार्वजनिक व्यय बढ़ता है और उदारवाद इस तरह की वृद्धि को अस्वीकारयोग्य मानता है| "बेहतर रोजगार" की पेशकश की ओर जाना इसलिए सामान्यतः एक खोखला मुहावरा भर है जब तक कि इसे औद्योगिकीकरण की और परिवार कृषि को आधुनिकीकरण की व्यवस्थित नीतियों द्वारा समर्थन नहीं किया जाता| चीन इसे आंशिक रूप से करने का प्रयास कर रहा है, लेकिन भारत नहीं|

उदारवादी सार्वजनिक ऋण को कम करने की जरुरत पर बल देते हैं और रिपोर्ट के लेखक भी इस दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं| फिर भी सार्वजनिक ऋण की वृद्धि की व्याख्या की जानी चाहिए: जिन नीतियों का यह परिणाम है? मैंने माना है कि यह वृद्धि सामान्य तौर पर उदारवादी नीतियों का अपरिहार्य परिणाम है| ऐसा चाहा गया क्योंकि यह वित्तीय निवेश के लिए अतिरिक्त पूँजी के अवसरों को प्रदान करता है| तीसरा, परियोजना के समन्वयक सभी उदारवादी अर्थशास्त्री हैं,जैसा उनके अन्य लेखन में है जो मैंने जाना है,वह दिखाता है| इसका मतलब है कि वे दो मुद्दों को प्रश्नांकित नहीं करते जिन्हें मैंने निर्णयात्मक माना है : 1) वे एक खुले मुक्त बाजार के गुण में विश्वास करते

हैं, जिसमें जहाँ तक संभव हो कम से कम राजनैतिक हस्तक्षेप से संचालित हो और 2) वे मानते हैं कि खुले वैश्वीकरण के स्वरूप का कोई विकल्प नहीं है| वे जितना संभव हो उतना मुक्त होकर पूँजी के एक देश से दूसरे देश में जाने की अनुमति दे रहे हैं, और यह वैश्विक विकास के लिए पूर्व शर्त है और अंततः गरीब देश विकसित देशों की और अधिक गिरफ्त में आ रहे हैं| वे सर्वश्रेष्ठ "सुधारवादी" (जोसेफ़) स्तिग्लित्ज़ जैसे लोग हैं|उनका दृढतापूर्वक मानना है कि गरीब देश वैश्विक पूँजीवादी व्यवस्था में जितना गहराई से जायेगे और अधिक आगे बढ़ेंगे, वे उतना अधिक विकसित होने को पकड़ पायेंगे| फिर भी पांच सदियों से जारी और गहरे असमान विकास के इतिहास को कम से कम इस परिकल्पना से प्रश्न करना चाहिए|

तो फिर असमानता की इस खतरनाक वृद्धि की जांच के लिए आपके क्या सुझाव हैं?

मैं मानता हूँ और बिना बढाए चढ़ाए कहूँ तो अपनी सतही स्थिति को बचाए रखने के क्रम में उदारवाद प्रामाणिक विकास की वास्तविक नीतियों को तैयार करने के किसी भी प्रयास की स्पष्ट रूप से निंदा करता है (ऐसा विकास जिसमें सभी लोगों को लाभ हो) | कोई समाज (राज्य शक्ति और लोग) जिसका लक्ष्य "उभरना" हो तो वह 1) एक आधुनिक एकीकृत औद्योगिक प्रणाली के निर्माण की एक लंबी प्रक्रिया जो जहाँ तक संभव हो आंतरिक लोकप्रिय मांगों पर केन्द्रित हो में प्रवेश की 2) परिवार कृषि के आधुनिकीकरण और खाद्य संप्रभुता को सुनिश्चित करने की और 3) एक सुसंगत गैर उदार नीति के द्वारा उपर्युक्त दोनों लक्ष्यों के लिए संघ योजना तैयार करने के कार्यों की उपेक्षा नहीं कर सकता| इसी में समाजवाद के लंबे मार्ग पर धीरे धीरे बढ़ने की कल्पना अन्तर्निहित है|

इस तरह की नीतियां एक तरफ जहाँ बाजार को विनियमित कर रहीं हैं तो दूसरी तरफ वैश्वीकरण को नियंत्रित कर रहीं है| उदाहरण के लिए वैश्वीकरण के अन्य दूसरे प्रतिमानों की ओर संघर्ष,पदानुक्रम के नकारात्मक प्रभावों को यथासंभव कम कर रहा है| ठीक यही स्थिति रिपोर्ट के लेखक (जो हैं) कल्पना नहीं करते हैं| केवल ऐसी नीतियाँ ही गरीबी उन्मूलन और अंततः असमानताओं को कम करने की स्थितियां बना सकतीं हैं| चीन इसी पथ पर आंशिक रूप से है; दक्षिण के अन्य देश नहीं हैं| उदारवाद की ऐसी कट्टरपंथी आलोचना के अभाव में गरीबी और असमानता पर बातचीत केवल आडम्बर और इच्छा रखना भर है| रिपोर्ट उससे परे नहीं जाती है|

यह आमतौर पर माना जाता है कि नव उदारवादी वर्षों में हमने देखा है कि राज्य ने कल्याणकारी उपायों और जन केन्द्रित उपायों से अपने को अलग कर लिया है, क्या आप भी ऐसा ही सोचते हैं? क्या राज्य का यह हटना है या वित्त पूँजी के साथ कोई सांठ गांठ है? नव उदारवाद में राज्य कैसे कार्य करता है?

वास्तविकता यह है कि साम्राज्यवादी देशों में भी एकाधिकार पूँजी को राज्य की मशीनरी की जरुरत है| उन्होंने राज्य को उनकी अनन्य हितों के वितरण के लिए पालतू बनाया है| आप इसे (राष्ट्रपति डोनाल्ड) ट्रम्प के यू.एस. सरकार के उपयोग के तरीकों में देख सकते हैं| और आप इसे ब्रिटेन,फ्रांस और जर्मनी जैसे तथाकथित राष्ट्रीय सहमति वाले राज्यों में भी देख सकते हैं| इसलिए यह कहना कि बाजार की शक्तियों ने राज्य को हटा दिया है बकवास है|

लिंक विकल्प

नव उदारवादी वैश्वीकरण के संकट से कैसे बाहर निकला जाए यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है|आप किसी भी वैकल्पिक आर्थिक नीति के एजेंडे और आधारभूत इमारत को वैश्वीकरण से डीलिंकिंग का सुझाव देते हैं| हम वैश्वीकरण के भंवर से कैसे डी लिंक कर सकते हैं? यदि हम डी लिंक का साहस करते हैं, तो निश्चित रूप से पूँजी का प्रवाह अर्थव्यवस्था से बाहर हो जाएगा| हम इस खतरे का सामना कैसे कर सकते हैं? नव उदारवाद से डी लिंक करने का साहस करने वाले किसी देश के लिए आपकी व्यवहारिक सलाह क्या है?

जैसा कि आप जानते हैं डी लिंक एक नारा है| मैं इसे एक नारे के रूप में इस्तेमाल करता हूँ| डी लिंक की वास्तविक समस्याएं हमेशा सापेक्षिक होतीं हैं| आप पूरी तरह से या सौ फीसदी डी लिंक नहीं कर सकते| लेकिन विशाल देश जैसे चीन भारत और कुछ अन्य देश बड़ी हद तक डी लिंक कर सकते हैं, वे 50 फीसदी से 70 फीसदी तक डी लिंक कर सकते हैं| सोवियत संघ और माओ के समय के चीन ने 80 या 90 फीसदी तक डी लिंक किया था,लेकिन पूरी तरह से नहीं| फिर भी उन देशों ने पश्चिमी और अन्य देशों के साथ व्यापार किया था| डी लिंक का अर्थ यह नहीं है कि आप दुनिया के बाकी देशों के बारे में भूल जाएँ और चाँद पर चले जाएँ| कोई भी ऐसा नहीं कर सकता और ऐसा करना तर्कसंगत नहीं होगा| डी लिंक का मतलब केवल मजबूर साम्राज्यवाद से आपकी शर्तें स्वीकार कराना है या शर्तों के एक हिस्से को स्वीकार कराना है| जब विश्व बैंक सामंजस्य करने की बात कहता है तो उसमें हमेशा सामंजस्य करने की एकतरफा दृष्टि होती है|

आपके देश के मामले में आज जो हम देखते हैं कि भारत यू.एस की मांगों के साथ सामंजस्य करता है, परंतु भारत साम्राज्यवाद के साथ सामंजस्य न करने का रास्ता चुन सकता था| यह वही रास्ता है जिसे नेहरु ने अपने समय में चुनने का प्रयास किया था और इंदिरा (गांधी) ने सफलतापूर्वक इसकी कोशिश की| वर्तमान मोदी सरकार भारत में जो करने का प्रयास कर रही है वह नाकाफी है| इसलिए आपको डी लिंक की ओर वापस जाना होगा और आप ऐसा कर सकते हैं| इसके लिए आपके पास पर्याप्त जगह है| बेशक यह सही है कि अफ्रीका में कुछ छोटे देश या मध्य अमेरिका या एशिया के कुछ क्षेत्रों को अन्य देशों से डी लिंक करने में ज्यादा कठिनाई होगी|

लेकिन यदि हम गुट निरपेक्ष आंदोलन का माहौल फिर से बनाते हैं,यदि हम एशिया,अफ्रीका और लैटिन अमरीका के देशों के बीच राजनैतिक एकजुटता बनाते हैं तो हम संख्या में कम नहीं होंगे| हम 85 फीसदी मनुष्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं| और हम कुछ ही दशकों में 85 फीसदी से भी अधिक का प्रतिनधित्व करेंगे| इसलिए हम कमजोर नहीं हैं| हम डी लिंक कर सकते हैं और हम सफलतापूर्वक विभिन्न स्तरों तक न केवल अपने आकार के अनुसार बल्कि हमारे वैकल्पिक राजनैतिक ब्लॉक के अनुसार डी लिंक कर सकते हैं,और यही डी लिंक उस केन्द्रीय साम्राज्यवादी ब्लॉक को हटाएगा,जिसने आज हमारे देशों को पकड़कर रखा है|

कई लोगों की धारणा है कि शुरू में उपनिवेशवाद तदनंतर वैश्वीकरण और विश्व बाज़ार के परिधि के तृतीय विश्व की अर्थव्यवस्थाओं के एकीकरण ने इन समाजों में आधुनिकता लाने में सहायता की है| भारत के पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भारत में रेल्वे व अन्य चीजों को शुरू करने के लिए ब्रिटेन का शुक्रिया अदा किया है| आज स्लोवेज जीजैक जैसे लोगों को डर है कि डी लिंकिंग से इन समाजों में सामंतवाद

की वापसी होगी| आप आधुनिकता के लिए वैकल्पिक मार्ग के बारे में क्या पूर्वानुमान करते हैं? क्या समाज पूंजीवादी चरणों से गुजरे बगैर आधुनिक बन सकता है?

जब श्री सिंह ने रेलवे और अन्य चीजों को शुरू करने के लिए अंग्रेजों का शुक्रिया अदा किया तो उनका कहना हकीकत का छोटा हिस्सा बयान करता है| इसके साथ ही अंग्रेजों ने भारतीय उद्योग को तबाह कर दिया जो अंग्रेजों से भी ज्यादा उन्नत थे| उसे नष्ट कर दिया गया| ठीक उसी समय,ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने उन लोगों को बदल दिया जिनकी आर्थिक सत्ता में ही राजनैतिक सत्ता थी|

जमींदार जो पहले भू स्वामी नहीं थे परन्तु उन्होंने किसान समुदाय और अन्य लोगों से भारत में विभिन्न राज्यों की सेवा और समर्पण से भूमि को इकट्ठा किया था,वे अंग्रेजी शासन के साथ नए भू स्वामी बन गए| इस तरह पूर्व में बंगाल प्रांत में,उत्तर पश्चिम में पंजाब प्रांत में और भारत के पश्चिम और उत्तरी भागों में बड़े जमींदारों के वर्ग का गठन किया गया| उन्होंने भूमि हड़पने का कार्य भी किया| श्री सिंह को याद रखना चाहिए कि अंग्रेजों ने न केवल रेलवे की शुरुआत की बल्कि उन्होंने क्रूरता,विनाश और दमन के विभिन्न रूपों को भी शुरू किया|

हमें यह जानना चाहिए कि हमें किस तरह की आधुनिकता की जरुरत है| पूंजीवादी आधुनिकता या समाजवादी आधुनिकता; दोनों ही आधुनिकता हैं| हम सामान्य रूप से आधुनिकता के बारे में नहीं कह सकते और यह भी नहीं कह सकते कि वैश्विक एकता आधुनिकता लाती है| भारत में यह शायद मोबाईल टेलीफोन लाती है परंतु यह 80 फीसदी भारतीयों की गरीबी भी लाती है,जो छोटी बात नहीं है| इसलिए हमें योग्य आधुनिकता लाना होगा| हम क्या चाहते हैं? बेशक हम आधुनिकता चाहते हैं| और हमें समझना चाहिए कि डी लिंकिंग कोई रास्ता नहीं है या यह पुराने भारत औपनिवेशिक भारत की ओर वापस ले जाने वाला नहीं है| यह भारत के साथ साथ अन्य जगहों पर भी आधुनिकता का नया स्वरूप ला रहा है|

आपके निबंध "समकालीन पूंजीवाद में फासीवाद की वापसी" में आप तर्क देते हैं कि पूंजीवाद का संकट वर्तमान दुनिया में फासीवाद की वापसी के लिए उपजाऊ परिस्थितियां बनाता है| यह दुनिया के विभिन्न भागों में दक्षिणपंथी ताकतों के उद्भव से स्पष्ट है| क्या आप पारंपरिक फासीवाद की पुनरावृत्ति की ओर इशारा कर रहे हैं?

तथाकथित नव उदारवादी वैश्वीकरण की व्यवस्था टिकाऊ नहीं है| यह बहुत सारे प्रतिरोधों को तैयार करती है,दक्षिण में नायकीय प्रतिरोध तैयार हुआ है,और चीन भी इसका सामना करने का प्रयास कर रहा है| इसने यू.एस. जापान और यूरोप के लोगों के लिए भी भारी समस्या पैदा की है| चूँकि यह टिकाऊ नहीं है इसलिए इसकी बढ़ती कमजोरियों को दूर करने के परिणामस्वरूप यह व्यवस्था फासीवाद की ओर देख रही है| यही कारण है कि पश्चिम में फासीवाद पुनः प्रकट हुआ| यह हमारे देशों की तरफ भी निर्यातित हुआ है| इस्लाम के नाम पर आतंकवाद स्थानीय फासीवाद का एक रूप है| और आज भारत में हिंदू प्रतिक्रियाएं,वह भी फासीवाद का ही एक प्रकार है| हालांकि भारत एक ऐसा देश है जहाँ हिंदू धर्म का बहुसंख्यक लोगों द्वारा अनुसरण किया जाता है,वे लोग भी समान रूप से स्वीकार किये जाते हैं जो हिन्दुवाद को नहीं मानते| अब भारत में नया शासन जिसे मैं एक तरह का अर्ध मृदु फासीवाद का प्रकार

कहूंगा,वह सभी के लिए मृदु नहीं है, वह भारत के लोगों के लिए कठिन से कठिन होता जाएगा| हमारे पास इस्लामिक विश्व के लगभग सभी देशों,पाकिस्तान से शुरू करके ईराक,सीरिया,इजिप्ट,अल्जीरिया,मोरक्को और अन्य देशों तक जाने पर लगभग एक जैसी स्थितियां हैं| यह कई अन्य देशों में भी प्रवेश कर रहा है|

दुस्साहसिक आंदोलन शुरू करने पड़ेंगे

(यह सामिर अमीन के साथ साक्षात्कार का दूसरा हिस्सा है| पहला हिस्सा फ्रंट लाइन के 11 मई 2018 के अंक में प्रकाशित हुआ था)

नव फासीवादी शक्तियों के उद्भव और विकास के साथ ही दुनिया भर में वामपंथी राजनीति के लिए बढ़ते जनसमर्थन कई झलकें दिखती है| यहाँ तक कि महानगरीय देशों में कई वर्षों से आम सहमति की राजनीति में उदासीन रहने वाले लोग भी वामपंथी राजनीति का समर्थन कर रहे हैं| वाम पंथी राजनीति ने ध्यानाकर्षित करने वाला समर्थन जुटाया है| ब्रिटिश और अमेरिका में क्रमशः जेरेमी कोर्बिन और बर्नी सेंडर्स की लोकप्रियता इसके प्रसिद्ध उदाहरण हैं| समकालीन राजनैतिक परिदृश्य में वामपंथ के लिए क्या क्या संभावनाएं और चुनौतियाँ हैं?

मेरी किताब एंडिंग द क्राइसिस ऑफ़ केपिटलिज्म ऑर एंडिंग केपिटलिज्म? में मैंने बताया है कि हम व्यवस्था से निकलने की शुरुआत किये बगैर संकट की इस पद्धति से नहीं निकल सकते हैं| यह एक विशाल चुनौती है| इसका समाधान कहीं भी कुछ वर्षों में नहीं हो पायेगा,न ही उत्तर में और न ही दक्षिण में| इसमें दशकों दशक का समय लगेगा| लेकिन इसका भविष्य आज से शुरू होता है| हम तब तक का इंतज़ार नहीं कर सकते जब तक कि यह व्यवस्था परिणामस्वरूप विशाल युद्ध और पारिस्थितिक तबाही न ले आये| हमें अभी से कुछ करना होगा|

इसकी जरुरत है कि वाम,कट्टरपंथी वाम – या मैं कहूंगा कि संभावित कट्टरपंथी वाम, जो तृतीय अंतर्राष्ट्रीय के कुछ ही संख्या में बचे वारिसों से ज्यादा व्यापक है,वामपंथी पार्टी और उनकी स्थिति उससे भी ज्यादा व्यापक है - उन्हें दुस्साहसी होने की जरुरत है| वर्तमान में, विश्व में, सभी जगह प्रतिरोधी आंदोलन हो रहे हैं, कुछ मामलों में काफी मजबूत प्रतिरोधी आंदोलन हैं| मजदूर लोग पूरी तरह से वैध संघर्ष कर रहे हैं; किन्तु वे रक्षात्मक तरीके से लड़ रहे हैं| यही नहीं,अतीत में उन्होंने जो कुछ भी हासिल किया है वे उसे बचाने में लगे हैं जिसे कि तथाकथित नव उदारवाद ने धीरे धीरे नष्ट कर दिया है| यह वैध तो है लेकिन पर्याप्त नहीं, यह एक रक्षात्मक रणनीति है जो एकाधिकार पूँजी की सत्ता व्यवस्था को बरकरार रखने की अनुमति देती है| लेकिन हमें इससे निकलने की सकारात्मक रणनीति अपनानी होगी जो कि आक्रामक रणनीति होगी और सत्ता संबंधों को बदल देगी| शत्रु को– सत्ता व्यवस्था को – मजबूर करना होगा कि वह आपको जवाब दे बजाय इसके कि आप सत्ता को जवाब दें| और ऐसे कदम उठाने होंगे जो इस व्यवस्था से उन्हें दूर ले जाए| मैं मैं अहंकारवश ऐसा नहीं कह रहा हूँ | मेरे जेब में इसकी कोई रूप रेखा नहीं है कि आस्ट्रिया में वामपंथियों को क्या करना चाहिए,चीन में क्या करना चाहिए या मेरे देश इजिप्ट में क्या करना चाहिए|

लेकिन हमें इस पर स्पष्ट रूप से खुलकर चर्चा करनी होगी| हमें रणनीतियों को सुझाना होगा,उन पर चर्चा करनी होगी,उनका परीक्षण करना होगा और उन्हें सही करना होगा| यह जीवन और संघर्ष है| हम रुक नहीं सकते| मैं कहना चाहता हूँ कि हम सबको पहली जगह जिस चीज की जरुरत है वह है दुस्साहस|

प्रतिरोध के लोकप्रिय आंदोलन को एक आक्रामक विकल्प में बदलने से हम इसकी शुरुआत कर सकते हैं| ऐसा कुछ देशों में हो सकता है| यह होना शुरू भी हो चुका है, किन्तु यूरोप के कुछ देशों में: मसलन ग्रीस,स्पेन और पुर्तगाल में | ग्रीस में हमने देखा है कि पहले ही प्रयास में यूरोपीय व्यवस्था हार गयी और यूरोपीय लोग यहाँ तक कि वे लोग जो ग्रीक आंदोलन से बहुत सहानुभूति रखते थे, वे यूरोप के दृष्टिकोण को बदलने के लिए पर्याप्त मजबूत थे, पर वे विचार को लामबंद करने में सक्षम नहीं हुए| यह एक सबक है| दुस्साहसिक आंदोलन शुरू करना पड़ेगा और मैं सोचता हूँ कि वे विभिन्न देशों में शुरू होंगे| मैंने इस पर चर्चा की है,उदाहरण के लिए फ्रांस के विद्रोही लोगों से |

मैंने कोई रूपरेखा प्रस्तावित नहीं की है,परंतु मैंने आम तौर पर बड़े एकाधिकारों और विशेष रूप से वित्तीय और बैंकिंग संस्थानों के पुनः राष्ट्रीयकरण की रणनीतियों को शुरू किये जाने की ओर इशारा किया है | लेकिन मैं कह रहा हूँ कि पुनः राष्ट्रीयकरण केवल पहला कदम है| यह अर्थव्यवस्था के प्रबंधन के समाजीकरण की ओर जाने के लिए क्रमशः योग्य हो रहे देशों के लिए एक पूर्व शर्त है| यदि यह केवल राष्ट्रीयकरण के स्तर पर जाकर रुकता है तो ठीक है, लेकिन तब आपके पास पूंजीवादी राज्य होगा जो निजी पूंजीवादी से बहुत अलग नहीं होगा| वह लोगों को धोखा देगा| लेकिन अगर आप इसे पहले कदम की तरह विचार करते हैं, तो यह पूरा रास्ता खोलता है|

पूंजीवाद सत्ता के,अर्थव्यवस्था की केन्द्रीयता के एक स्तर तक पहुँच चुका है और इसलिए राजनैतिक सत्ता की भी,पिछले 50 सालों की इससे तुलना नहीं की जा सकती|एक मुट्ठी भर,कुछ दसियों हजार लोगों के पास भारी बड़ी कम्पनियां हैं,और कुछ मुट्ठी भर 20 से भी कम लोगों के पास बड़े बैंकिंग संस्थान हैं जो अकेले ही सब कुछ तय कर रहे हैं| फ्रेंकोइस मोरिन, शीर्ष वित्तीय विशेषज्ञ जो इस क्षेत्र के बारे में जानते हैं उनका कहना है कि 20 से भी कम वित्तीय समूह वैश्विक एकीकृत मौद्रिक एवं वित्तीय प्रणाली के संचालन का 90 प्रतिशत का नियंत्रण करते हैं| अगर आप 15 अन्य बैंकों को भी इसमें जोड़ दें तो यह संख्या 90 फीसदी से 98 फीसदी तक भी जा सकती है| यह कुछ मुट्ठी भर बैंक हैं| यही केंद्रीकरण, सत्ता का केंद्रीकरण है संपत्ति का नहीं| जो छितराई हुई है,किन्तु यह कम महत्वपूर्ण है; महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि संपत्ति को कैसे नियंत्रित किया जाए| यही राजनैतिक जीवन के नियंत्रण को तय करेगा| हम अभी बुर्जुआजी लोकतंत्र जो 19वीं सदी में था और 20वीं सदी की पहली छमाही में था,उससे काफी दूर हैं|

हमारे पास अब एक दलीय व्यवस्था है| सामाजिक लोकतंत्रवादी जो सामाजिक उदारवादी हुए हैं| उनके साथ ही पारंपरिक वाम और पारंपरिक दक्षिण में कोई स्पष्ट अंतर नहीं है| इसका मतलब है कि हम एक दलीय व्यवस्था में रह रहे हैं,वैसे ही जैसा यू एस के मामले में है, जहाँ लोकतंत्रवादी और प्रजातंत्रवादी हमेशा से एक ही दल रहे हैं| ऐसा यूरोप के मामले में नहीं है,और इसलिए पूंजीवाद जो अतीत में था उसे सुधारा जा सकता है| द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सामाजिक लोकतांत्रिक कल्याण सुधार बड़े सुधारों में से थे| मेरे विचार से वे भले ही प्रगतिशील सुधार थे,यद्यपि वे दक्षिण के देशों में साम्राज्यवादी रवैये को बरकरार रखे हुए थे| लेकिन अब ये सुधार असंभव हो रहे हैं और आप इसे जहाँ एक दलीय व्यवस्था है वहां देख सकते हैं,यह व्यवस्था अपनी वैधता खो रही है| लेकिन यह व्यवस्था फासीवाद

के लिए,नव फासीवाद की ओर बहाकर ले जाती है,हम देख भी रहे हैं कि वह सभी जगह उदित हो रहा है, उत्तर में भी, और दक्षिण में भी| यह एक कारण है कि हमें इसके पुनर्संरचित करने से पूर्व इस व्यवस्था को तोड़ना होगा|

पांचवां अन्तर्राष्ट्रीय

क्या विभिन्न देशों में पृथक पृथक हो रहे संघर्ष सामान्यीकृत एकाधिकार पूँजी की समक्ष कोई चुनौती रख सकते हैं,जो सच्चे अर्थों में अपने चरित्र में अंतर्राष्ट्रीय हो? किसी तरह के अंतर्राष्ट्रीय सहयोग या जनसंघर्ष की अंतर्राष्ट्रीयतावाद की भावना की जरूरतों के बारे में आपका क्या कहना है?

मैं सोचता हूँ कि हमें पांचवे अंतर्राष्ट्रीय की जरुरत है| हमें न केवल भविष्य की विचारधारा के बुनियादी हिस्से की तरह अंतर्राष्ट्रीयतावाद को पुनर्जीवित करने की जरुरत है, बल्कि हमें इसे संगठित करना चाहिए, इसके लिए विभिन्न देशों में हो रहे संघर्षों को जोड़ने का प्रयास करना चाहिए| अब यह अंतरराष्ट्रीय तीसरे को जन्म नहीं दे सकता| क्योंकि तीसरा अंतर्राष्ट्रीय अक्टूबर क्रांति की जीत और एक मजबूत नए राज्य सोवियत संघ की जीत के बाद आया और इसलिए बचा रहा,अच्चा रहा या बुरा पर यह दूसरों के लिए एक आदर्श की तरह है| हम अभी इस तरह की स्थिति में नहीं हैं और इसलिए हमें नए अंतर्राष्ट्रीय के लिए अन्य तरीकों को सोचना होगा| यदि हम दूसरे और तीसरे अंतर्राष्ट्रीय को देखते हैं – दूसरा, प्रथम विश्व युद्ध तक है,उसके बाद नहीं – उन्होंने "एक देश एक पार्टी" के विचार को साझा किया-सही पार्टी, उनके लिए अन्य सभी पार्टियाँ या विचलनवादी रहीं या संसोधनवादी|

इसके अलावा,जब हम दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय को देखते हैं तब हम पाते हैं कि वहां वास्तव में, जर्मनी में एक पार्टी थी,लेकिन यह पार्टी आधी मार्क्सवादी और आधी लासालियन थी| फ्रांस में एक पार्टी थी, लेकिन वह (था) वास्तव में तीन धाराओं के साथ जुड़ी थी| ब्रिटेन में एक पार्टी थी लेकिन वह मजदूर संघवाद और फेबियनवाद मिश्रित थी| इसलिए वे एक दूसरे से भिन्न थे,परन्तु उन सभी में एक चीज साझी थी, उनका साम्राज्यवाद के पक्ष में उपनिवेशवादी रवैया और यही 1914 में सिद्ध हुआ,उन्होंने एक दूसरे के खिलाफ़ अपनी बुर्जुआजी के साथ कार्य किया| तीसरे अंतर्राष्ट्रीय ने "एक देश एक पार्टी" को मान्यता दी – 21 शर्तें (कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की सदस्यता के लिए) – अन्य सभी गद्दार और संशोधनवादी रहे|

आज हम अलग परिस्थिति में हैं|हमारे पास संभावित कट्टरपंथी,समाजवादी समर्थक,पूँजीवाद विरोधी,साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियां प्रत्येक देश में अलग अलग हैं| हमें उन्हें एक साथ लाना होगा| हमें यह समझना होगा कि हम जो सामान्य रूप से साझा कर रहे हैं वह हमारे बीच के मतभेदों से ज्यादा महत्वपूर्ण है| हमें मतभेदों पर चर्चा करनी होगी और बिना किसी अहंकार या घोषणा के कि :"मैं सही हूँ और आप गलत है" हमें मुक्त रूप से चर्चा करनी होगी | हमारे बीच जो साझा है वह अधिक महत्वपूर्ण है और यही अंतर्राष्ट्रीयतावाद के पुनर्निर्माण के लिए आधार होना चाहिए| मैं उत्तर के देशों और दक्षिण के देशों, दोनों के लिए कह रहा हूँ| प्रत्येक देश की अपनी विशिष्ट स्थितियां हैं और एक दूसरे देश से अलग स्थितियां भी हैं| सामान्य दृष्टि तो एक जैसी है किन्तु स्थितियां भिन्न हैं| किसी भी कीमत पर मेरा यही विचार है कि हम इस प्रक्रिया को कैसे शुरू करें|

वहां कुछ अस्पष्टताएँ है और हम उनकी उपेक्षा नहीं कर सकते| हमें लोगों के साथ व्यापक गठबंधन करना होगा जिन्होंने कभी नहीं सोचा होगा कि समाजवाद पूंजीवाद के संकट का जवाब होना चाहिए| वे अब तक भी सोचते होंगे कि पूंजीवाद में सुधार किया जा सकता है| तो क्या? यदि हम इस पूँजीवाद के खिलाफ एक साथ कार्य कर सकते हैं जैसा कि आज है,तो यह पहला कदम होगा|

लेकिन हमें इससे आगे जाकर कि पांचवां अंतर्राष्ट्रीय कैसे बने इस बारे में सोचना होगा| मेरे पास इसकी कोई रूप रेखा नहीं है| यह कसी सचिवालय या संगठनात्मक नेतृत्व के निकायों की स्थापना करने जैसा नहीं है| पहले कामरेडों को इस विचार से ही सहमत होना होगा, जो हमेशा नहीं होता| दूसरा,यूरोपियनों ने साम्राज्यवाद विरोधी एकजुटता और अन्तरराष्ट्रीयतावाद को तथाकथित वित्तीय सहायता और मानवीय हस्तक्षेप के पक्ष में त्याग दिया है,इसमें बमबारी करने वाले लोग भी शामिल हैं| यह अंतर्राष्ट्रीयतावाद नहीं है| मुझे लगता है कि राष्ट्रीय नीतियाँ – हम इस शब्द का उपयोग करते हैं क्योंकि इसकी जगह अन्य कोई शब्द नहीं है- देशों की सीमाओं के भीतर हो रहे संघर्षों का परिणाम हैं| यद्यपि ये देश वास्तव में राष्ट्र राज्य हैं या अथवा बहुराष्ट्रीय राज्य,वे परिभाषित सीमाओं के भीतर ही संघर्ष करते हैं|

परंतु विद्यमान समस्याएं इस विचार का खंडन नहीं करतीं कि परिवर्तन आधार से शुरू करना होगा,शीर्ष से नहीं और यह आधार राष्ट्र है| यह अपेक्षा मत करो कि संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन विश्व की सभी सरकारों के साथ कुछ भी अच्छा और प्रभावी तय कर रहा है| ऐसा कभी नहीं होगा| यहाँ तक कि यूरोपीय संघ के संबंध में भी ऐसी अपेक्षा मत करो| इसे नीचे से शुरू करना होगा| जब देशों के बीच शक्ति संतुलन बदलेगा तब ही अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शक्ति संतुलन शुरू होगा| इसलिए अंतर्राष्ट्रीय एकजुटता के लिए पांचवें अंतर्राष्ट्रीय को तैयार करने के कार्य के लिए, इन परिवर्तनों के संघर्षात्मक पहलुओं को कम करना चाहिए और उन्हें एक दूसरे के पूरक बनाना चाहिए| यह सच्चे अर्थों में अंतर्राष्ट्रीयतावाद है|

लोकप्रिय आंदोलनों और वर्ग की लामबंदी के साथ,वहां दुनिया भर में नागरिक समाज आंदोलन और एनजीओ (गैर सरकारी संगठन) आंदोलन हो रहे हैं| अलग पहचान के लिए भी आंदोलन हो रहे हैं| इन नागरिक समाज आन्दोलनों के लिए आपकी कोई सहमति है?

पूंजीवाद के खिलाफ़ विरोध केवल नव उदारवादियों द्वारा उनके सामाजिक हितों के खिलाफ सामने से किये गए आक्रमण के परिणामों के खिलाफ़ विरोध भर नहीं हो सकते| नए प्रकार के व्यापक सामाजिक गठबंधनों की राजनैतिक जागरूकता उस स्तर तक पहुंचना चाहिए जो हमारे देशों में सत्तारूढ़ कम्परेड गठबंधनों और पश्चिमी देशों में सत्तारूढ़ साम्राज्यवादी समर्थक गठबंधनों को हटा सके|

सर्वहारा के अगुआ के रूप में लोकतांत्रिक केंद्रवाद के लेनिन और कम्युनिस्ट पार्टी के विचार की क्या प्रासंगिकता है? वर्तमान के क्रांतिकारी संघर्षों के रूप,अंतर्वस्तु और आकार के बारे में आपके क्या विचार हैं?

शायद, लेनिन के समय में एक दलीय व्यवस्था ही शासन की पुरानी पद्धति का संभव विकल्प था| आज के मामले में ऐसा नहीं है| हमें एक नए अंतर्राष्ट्रीय को पुनः बनाना होगा,एक ऐसा अंतर्राष्ट्रीय जो मजदूर लोग और अन्य लोगों का हो,इसका मतलब कई संख्या में किसान और समाज के घटकों से है जो सर्वहारा के परे भी जा सकें| भारत में,आप देख सकते हैं कि आपके पास शहरी सर्वहारा और शहरी ग़रीबों के बीच गठबंधन नहीं है,उनके पास कोई सर्वहारा चेतना नहीं है जबकि भारतीय ग्रामीण समाज या किसान विशाल बहुमत में हैं,तब आप प्रतिरोध का निर्माण नहीं कर सकते| ये अलग सामाजिक शक्तियां हैं और विभिन्न राजनैतिक आवाजों की प्रतिनिधि हो सकतीं हैं| परन्तु हमें जानना होगा कि हम साझा क्या है| वे हित जिन्हें हम साझा करते हैं वे मतभेदों से ज्यादा महत्वपूर्ण हैं| हमें व्यापक राजनैतिक गठबंधन की जरुरत है जो विभिन्न वर्गों को मानने वाले लोगों को लामबंद कर सकें,ऐसे सभी लोगों को जो आज साम्राज्यवाद के भुक्तभोगी हैं|

चीन ने हाल ही में महत्वपूर्ण आर्थिक वृद्धि प्राप्त की है| हालांकि वह अभी भी कम्युनिस्ट राज्य है,उसकी आर्थिक उपलब्धि का श्रेय 1978 से बाजार के अनुकूल दृष्टिकोण की सफलता के लिए जाता है| आर्थिक विकास के चीनी माँडल को आप कैसे लेते हैं?

हमें चीनी क्रांति से शुरू करना होगा| हमारे पास चीन में जिसे मैं महान क्रांति कहता हूँ थी| आधुनिक इतिहास में तीन महान क्रांतियाँ हुई हैं – फ्रांसीसी क्रांति,रूसी क्रांति और चीनी क्रांति- वियतनाम और क्यूबा जैसे कुछ अन्य देशों के साथ| लेकिन हम इन तीन बड़ी क्रांतियों को ही लेते हैं|

मेरा जो मतलब है कि महान क्रांतियों का परियोजना लक्ष्य तत्काल क्या संभव है, उससे भी आगे जाकर देखना है| फ्रेंच क्रांति ने इसे स्वतंत्रता और समानता कहा| तथाकथित अमरीकन क्रांति ने इस लक्ष्य को प्रेक्षित नहीं किया| शब्द "लोकतंत्र" यू.एस. संविधान में उपस्थित नहीं होता है और लोकतंत्र को एक खतरे के रूप में माना है| इसी खतरे से बचने के लिए इस व्यवस्था का आविष्कार किया गया| इस व्यवस्था ने उत्पादन संबंधों को नहीं बदला है| गुलामी अब भी इस व्यवस्था का निर्णायक बनी हुई है; जॉर्ज वाशिंगटन दासों के स्वामी थे| फ्रेंच क्रांति ने स्वतंत्रता और समानता के परस्पर विरोधी मूल्यों को जोड़ने की कोशिश की| संयुक्त राष्ट्र में,स्वतंत्रता और समानता की जगह, स्वतंत्रता और प्रतिस्पर्धा थी और स्वतंत्रता असमानता की शर्त के तहत थी| रुसी क्रांति की घोषणा थी : "दुनिया के मजदूरो एक हो जाओ|" जैसा कि लेनिन ने कहा था, "क्रांति की शुरुआत कमजोर कड़ी से हुई किन्तु उसे शीघ्र विस्तार करना चाहिए|" वह भी छोटे से एतिहासिक काल में| वह उम्मीद करते थे कि जर्मनी में भी ऐसा होगा, लेकिन इतिहास ने साबित किया कि वह गलत थे| वह संभव हो सकती थी, पर नहीं हुई| अंतर्राष्ट्रीयतावाद वास्तविक इतिहास का एजेंडा नहीं था| चीनी क्रांति ने नारा दिया "शोषित लोग एकजुट हो" जिसका मतलब वैश्विक स्तर पर अंतर्राष्ट्रीयतावाद से था, इसमें दक्षिण के कृषक देश भी शामिल थे,यह एक कदम आगे था, एक व्यापक अंतर्राष्ट्रीयतावाद का विस्तार| यह भी एजेंडे में नहीं था जो कि तत्काल पाया जा सकता था| 1955 में बेन्दुंग,जिसमें भी चीनी क्रांति की गूँज थी,वह बहुत डरा हुआ था| उसने ज्यादा कुछ हासिल नहीं किया| वह राष्ट्रवादी ताकतों के नीचे कमजोर हो गया और बड़ी हद तक एक बुर्जुआ राष्ट्रीय परियोजना के सांचे की तरह बना रहा|

साफतौर पर चूँकि महान क्रांतियाँ अपने समय से आगे थीं,उनका अनुसरण थर्मिडोर[1] और रेस्टोरेशन[2] द्वारा किया गया| थर्मिडोर रेस्टोरेशन नहीं है; इसका मतलब है दीर्घकालिक लक्ष्य के लिए एक कदम पीछे हटना परन्तु निर्धारित समय में रियायतों के साथ इसे बनाए रखना| सोवियत संघ में थर्मिडोर कब था? शायद वह 1924 का समय था, एन.ई.पी. (न्यू इकोनोमिक पालिसी) के साथ,हालांकि लीओन ट्रोट्स्की ने कहा था कि वह 1927 का समय था| चीनी कहता है कि यह (निकिता) ख्रुश्चेव के समय हुआ| इसके लिए अच्छे तर्क है परन्तु अन्य लोग सोचते हैं कि वह (लियोनिद) ब्रेजनेव के बाद आया| हालांकि पूंजीवाद की वापसी वास्तव में (बोरिस) येल्तसिन और (मिखाइल) गोर्बाचोव के साथ हुई| उस समय समाजवाद का लक्ष्य त्याग दिया था|

चीन में शुरू से ही 1950 से थर्मिडोर था| जब माओ जेडांग से कहा गया कि "क्या चीन समाजवादी है? उन्होंने कहा कि नहीं चीन एक जनवादी गणराज्य है",और समाजवाद के निर्माण का एक वृहद रास्ता है; उन्होंने समाजवाद के निर्माण के लिए चीनी अभिव्यक्ति "एक हजार साल" का उपयोग किया| इसलिए थर्मिडोर वहां शुरू से ही था| वहां थर्मिडोर से परे जाने के दो प्रयास हुए| पहला प्रयास बड़ी कामयाबी हासिल करना था|

फिर हमारे पास डेंग जिओपिंग के समय दूसरा थर्मिडोर था| हमारे पास अब तक कोई रेस्टोरेशन नहीं है,ऐसा इसलिए नहीं है क्योंकि औपचारिक रूप से कम्युनिस्ट पार्टी का राजनैतिक सत्ता पर एकाधिकार है बल्कि इसलिए क्योंकि चीनी क्रांतिकारी प्रक्रिया से जो भी हासिल किया गया है उसके कुछ बुनियादी पहलुओं को कायम रखा जा सके और यह बहुत ही आधारभूत है| मैं यहाँ भूमि के राज्य स्वामित्व और किसान कृषि सुधारों के खांचे में उनके परिवारों द्वारा भूमि उपयोग को संदर्भित कर रहा हूँ,जो एक आधुनिक औद्योगिकीकरण प्रणाली के संघटन के साथ ही एकीकृत है| ये ही दोनों पैर हैं,जिन पर चीन खड़ा होता है और चलता है| यह एक प्रकार के पूंजीवादी राज्य को परिभाषित करता है| इसके साथ ही चीनी परियोजना वैश्वीकरण में उनकी भागीदारी के विचार को नकारता नहीं है, जिस पर पूंजीवादी /साम्राज्यवादी बड़ी शक्तियों का प्रभुत्व है| निश्चित रूप से चीन की "दो पैर" वाली रणनीति के साथ वैश्वीकरण का संघर्ष आता है| वे एक दूसरे के पूरक नहीं हैं;वे संघर्ष में हैं| चीन ने व्यापार के भूमंडलीकरण और निवेश के भूमंडलीकरण में प्रवेश किया है परन्तु राज्य का नियंत्रण के साथ और कम से कम एक निश्चित प्रभावी विस्तार के साथ|

[1] क्रांतिकारी आंदोलनों के इतिहासकारों के लिए, शब्द थर्मिडोर का अर्थ क्रांति में आये चरण से है,जब राजनीतिक पेंडुलम क्रांति से पूर्व राज्य सदृश्य स्थितियों की ओर वापस मुड़ जाता है, और मूल क्रांतिकारी नेतृत्व के हाथों से सत्ता फिसल जाती है। लियोन ट्राटस्की, अपनी पुस्तक 'द रिवोलुशन बेट्रेड', में जोसेफ़ स्टालिन के उदय को और क्रान्ति के बाद की नौकरशाही को 'सोवियत थर्मिडोर' से संदर्भित करते हैं|

[2] यहाँ रेस्टोरेशन से तात्पर्य साम्राज्य की पुनः बहाली से है,पुरानी व्यवस्था की बहाली होने से है, क्रांति के बाद की वह अवस्था जहाँ लोग तो बदल जाते हैं किंतु नौकरशाही वही रहती है और क्रान्ति से पूर्व के राज्य की पुनर्वापसी हो जाती है| एक तरह से कहा जाए तो लम्बे समय के थर्मिडोर की स्थिति रेस्टोरेशन ला सकती है|

इसके अतिरिक्त चीन उन देशों की तरह वैश्वीकरण के भीतर उस देशों की तरह परिचालन नहीं कर रहा है जो मुक्त व्यापार,मुक्त निवेश और वित्तीय भूमंडलीकरण की थोपी गई शर्तों को स्वीकारते हैं| चीन वित्तीय वैश्वीकरण में नहीं गया है| उसने अपनी स्वतंत्र वित्तीय व्यवस्था को बनाए रखा है जो राज्य द्वारा संचालित होती है,न केवल इसके रूप में बल्कि इसके अर्थ में भी| मेरी योग्यता के अनुसार चीन समाजवादी नहीं है,लेकिन वह पूंजीवादी भी नहीं है| इसमें परस्पर विरोधी प्रवृत्तियाँ भी हैं| क्या वह समाजवाद की या पूंजीवाद की ओर बढ़ रहा है? चीन में ज्यादातर सुधार जो शुरू किये गए हैं,विशेषकर डेंग जिओपांग के बाद, वे पूंजीवादी उत्पादन के स्वरूप और बुर्जुआ वर्ग के उद्भव के लिए जगह बना रहे हैं और जगह को विस्तार भी दे रहे हैं| परंतु अभी तक "दो पैर" वाली रणनीति के द्वारा चिन्हित अन्य आयामों को और पहचान को बनाए रखा गया है| और यही पूंजीवाद के तर्कों के साथ संघर्ष करता है| मैं चीन को ऐसे ही देखता हूँ|

सोवियत संघ की सबसे महत्वपूर्ण कमजोरियां केन्द्रीय नौकरशाही,दलों के भीतर लोकतंत्र की कमी,न ही सर्वहारा की तानाशाही थी बल्कि सर्वहारा के लिए एक दल की तानाशाही थी| प्रभात पटनायक कहते हैं कि मजदूर वर्ग के लिए बहुदलीय का विकल्प एक दल की तानाशाही को रोकने में मदद करेगा| आप सोवियत संघ के अनुभव की पृष्ठभूमि के खिलाफ समाजवादी राज्य की राजनीतिक संरचना की इच्छा और जरुरत को कैसे विश्लेषित करते हैं?

मैं प्रभात पटनायक के बेहतर मूल्यांकन की सराहना करता हूँ| उनके तर्क सबसे दिलचस्प हैं और आमतौर पर सही| मुझे लगता है कि सोवियत संघ में,नौकरशाही की प्रवृत्तियों की उनकी आलोचना पूर्णतः सही है| उनका भारत में कार्यरत दलों की नौकरशाही की आलोचना में भी बहुमूल्य योगदान है| हमें उस समस्याओं को मामले दर मामले में देखना चाहिए| वह भारत में अलग है और इजिप्ट या अन्य जगहों पर अलग|

आपने राजनैतिक इस्लाम के उदभव,उसकी विचारधारा और प्रकृति के बारे में बहुत कुछ लिखा है| हालांकि इस्लामवादी अक्सर पश्चिमी संस्कृति के खिलाफ बयानबाजी करते रहे हैं,आपने इसका विश्लेषण किया है कि कैसे ये शक्तियां साम्राज्यवादी ताकतों के साथ निकट गठबंधन में हैं| आप अरब दुनिया के समकालीन राजनैतिक परिदृश्य को कैसे व्याख्यायित करते हैं?

ट्यूनीशिया और इजिप्ट में (2011 में सरकार विरोधी विद्रोह के) विस्फोट से हैरान था| उन्हें इसकी उम्मीद नहीं थी| सी आई ए (केन्द्रीय खुफिया एजेंसी) सोचती थी कि (राष्ट्रपति जिन अल आबदीन) बेन अली (ट्यूनीशिया के) और (राष्ट्रपति हुस्नी) मुबारक (इजिप्ट के) उनके पुलिस बलों की तरह मजबूत थे| फ्रांसीसी भी ऐसा ट्यूनीशिया के बारे में सोचते थे| लेकिन ट्यूनीशिया और इजिप्ट में इन विशाल अराजक आंदोलनों में रणनीति की कमी थी और इसी कमजोरी ने उन्हें पुरानी संरचना में बने रहने और अपना वध करने की अनुमति दी| लेकिन फिर, बस इन दोनों विस्फोटों के तुरंत बाद पश्चिमी सरकारें समझ गयीं कि अरब देशों में अन्य जगहों पर भी इन्हीं कारणों से इसी तरह के आंदोलन हो सकते हैं|

उन्होंने "क्रांतियों" की जगह लेने के लिए अपने नियंत्रण में आयोजित "रंगीन" आंदोलनों को लाना तय किया| उन्होंने उसके प्रभाव का चयन किया,उन्होंने उनके सहयोगी खाड़ी देशों द्वारा वित्त पोषित और नियंत्रित इस्लामिक प्रतिक्रियावादी आंदोलन का समर्थन करना तय किया| पश्चिम की रणनीति लीबिया में सफल रही किन्तु सीरिया में असफल हो गयी| लीबिया में शासन के खिलाफ कोई लोकप्रिय जन विरोध नहीं था| वे लोग जिन्होंने आंदोलन को शुरू किया,वे छोटे इस्लामिक सशस्त्र समूह थे जिन्होंने तत्काल सेना और पुलिस पर हमला कर दिया और दूसरे दिन नाटो (उत्तर अटलांतिक संधि संगठन),ब्रिटेन और फ्रांस ने उन्हें छुड़ाया और वास्तव में नाटो ने जवाब दिया और इसमें शामिल हो गया| अंततः पश्चिमी शक्तियों ने उनका लक्ष्य पा लिया जो कि लीबिया को तबाह करना था| आज लीबिया उससे भी बदतर स्थिति में है जैसा कि वह पूर्व में था,उसे ऐसी स्थिति में लाना ही उसका लक्ष्य था| इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि उनका लक्ष्य देश को तबाह करना था|

यही स्थिति सीरिया के साथ है| सीरिया में शासन के खिलाफ असैन्य लोकतांत्रिक लोकप्रिय आंदोलन बढ़ रहा था क्योंकि शासन को सत्ता में बचाए रखने के लिए वह नव उदारवाद को स्वीकारने की दिशा में बढ़ गया था| परन्तु पश्चिम, विशेषकर संयुक्त राज्य ने इंतज़ार नहीं किया| दूसरे ही दिन उनके पास इस्लामिक आंदोलन था जो उसमें उसी परिदृश्य के साथ शामिल हो गया और उसने सेना और पुलिस पर आक्रमण कर दिया और तब पश्चिम को सहायता के लिए बुला लिया गया| हालांकि शासन इसका बचाव करने में सक्षम था| संयुक्त राज्य को सेना द्वारा जितना विघटन अपेक्षित था,उतना नहीं हुआ| तथाकथित सीरियाई मुक्त सेना एक झांसा था| वैसे लोग कम संख्या में थे जिनको इस्लामवादियों ने तत्काल अपने में मिला लिया| और अब पश्चिमी शक्तियां जिनमें संयुक्त राष्ट्र शामिल है को मानना पड़ा कि वे युद्ध हार चुके हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि सीरिया के लोगों ने इसे जीत बल्कि इसका मतलब है कि गृह युद्ध और हस्तक्षेप के जरिये देश को तबाह करने का लक्ष्य असफल हो गया| साम्राज्यवादी शक्तियां,देश की एकता या संभावित एकता को नष्ट करने में सफल नहीं हो पाई| और यही वे करना चाहते थे और वास्तव में वे इजराइल के अनुमोदन से करना चाहते थे – यूगोस्लाविया में जो हुआ उसको दोहराना, लेकिन वह सफल नहीं हो पाया|

इजिप्ट में,यू.एस.की उन यूरोपीय लोगों द्वारा वापसी हुई जो सामान्य रूप से उसका अनुसरण करते थे – यूएस ने मुस्लिम भाईचारे को विकल्प की तरह चुना | इसकी शुरुआत में ही 25 जनवरी 2011 को मुस्लिम भाईचारा मुबारक के साथ व्यवस्थित होकर आंदोलन के खिलाफ हो गया| केवल एक सप्ताह बाद ही उन्होंने पाला बदल लिया और क्रांति में शामिल हो गया| वह वाशिंगटन का आदेश था| दूसरी तरफ,कट्टरपंथी वाम लोकप्रिय और कच्चे आंदोलन से आश्चर्य में था; इस आंदोलन में युवा कई संगठनों में विभाजित थे, परिणामस्वरूप वे काफी भ्रम थे और रणनीतिक क्षमता और विश्लेषण की कमी थी| अंततः आंदोलन का परिणाम वही हुआ जो यू.एस. चाहता था: चुनाव| उन चुनावों में वाम समर्थित हमदीन सबाही ने (मोहम्मद) मोरसी से बहुत अधिक मत पाए,लगभग 5 मिलियन अधिक मत| वह यूनाईटेड स्टेट सचिवालय था, न कि इजिप्टीयन चुनाव आयोग,जिसने मोरसी को विजयी घोषित किया|

मुस्लिम भाईचारे की गलती यह थी कि उन्हें लगता था कि उन्होंने अंतिम लक्ष्य और सम्पूर्ण जीत हासिल कर ली है और वे अकेले ही शासन कर सकते थे| इसलिए वे सभी के साथ संघर्ष में शामिल हो गए,सेना के साथ भी| यदि वे

होशियार थे और सेना के साथ उनका समझौता हो गया होता,तो वे अभी भी सेना के साथ सत्ता साझा कर रहे होते और उनके कार्यालय में होते| वे अपने लिए सभी शक्तियां चाहते थे और उनका उपयोग गलत और वेवकूफ तरीकों से करना चाहते थे और इसलिए जीत के कुछ ही हफ़्तों के बाद उन्होंने सबको अपने खिलाफ कर लिया|

यह 30 जून 2013 को हुआ: देश भर में मुस्लिम भाईचारे के खिलाफ लोगों ने सड़कों पर आकर प्रदर्शन किया| उस समय में यू.एस. दूतावास ने सेना के नेतृत्व को मुस्लिम भाईचारे का समर्थन करने के लिए कहा, बजाय लोगों के समर्थन के| सेना ने मोरसी को गिरफ्तार करने की जगह और तथाकथित संसद को भंग करने की जगह, मुस्लिम भाईचारे के लोगों द्वारा चुनी गयी और गैर निर्वाचित निकाय को लाना तय किया| परंतु नए शासन ने उन्हीं नव उदारवादी नीतियों को जारी रखा|

1978 में एडवर्ड सईद द्वारा रचित "ओरिएंटलिज्म" पुस्तक अभूतपूर्व और यूरोकेंद्रित विश्व दृष्टि की उत्तर औपनिवेशिक आलोचना की व्यापक विमर्श वाली पुस्तक थी| हालांकि आपकी पुस्तक "यूरोसेंट्रिसिज्म" थी जिसने यूरोकेंद्रीय विश्व दृष्टि की आलोचना की विशाल परियोजना में पूंजीवाद की आलोचना की| उत्तर उपनिवेशवाद और विभिन्न प्रकार के उत्तर आधुनिकतावाद से आपकी क्या सहमतियाँ और असहमतियां हैं? क्या वर्तमान के यूरोकेंद्रीय विश्व में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन है?

"ओरिएंटलिज्म" साम्राज्यवाद की सांस्कृतिक आलोचना है| वह साम्राज्यवाद की राजनैतिक और आर्थिक आलोचना नहीं है| लेकिन बात यह है कि साम्राज्यवाद केवल सांस्कृतिक नहीं है| यह मूलतः राजनैतिक प्रभुत्व और आर्थिक शोषण का एक रूप है जो एक सांस्कृतिक प्रभुत्व को लाता है और "ओरिएंटलिज्म",समस्या के केवल सांस्कृतिक पक्ष को ही देखता है और यहाँ एडवर्ड सईद सबसे महत्वपूर्ण पक्षों को रखने से चूक गए हैं वे हैं :राजनैतिक और आर्थिक पक्ष|

मार्क्स का प्रसिद्द कथन कि पूंजीवाद एक ध्रुव पर धन पैदा करता है और दूसरे ध्रुव पर गरीबी| ऐसा पूंजीवाद और मजदूरों के संबंधों के मामले में और उत्तर के केन्द्रीय देशों और दक्षिण के परिधीय देशों के संबंधों के मामले में भी है| आप जैसे निर्भरता सिद्धांत के चैम्पियन विद्वान पूंजीवादी विकास के इस अंतर्विरोध की भयावहता को सुनाते हैं| यह नव उदारवादी वैश्वीकरण के युग में कैसे काम करता है?

पूंजीवाद ने बड़े पैमाने पर गरीबी पैदा की है,विशेष रूप से पृथ्वी के 85 फीसदी लोगों को गरीब बनाया है और मुझे लगता है कि भारत इसका उदाहरण है| भारत में आपके पास जितनी भी ऊँची वृद्धि है,शायद सिर्फ 15 से 20 फीसदी लोगों को ही इसका फायदा हो रहा है और 85 फीसदी लोग गरीब हुए हैं| वे सिर्फ इससे लाभान्वित नहीं हुए, बल्कि इससे पीड़ित हैं|

आज मार्क्सवाद की विरासत और प्रासंगिकता क्या है? कई लोगों का मानना है कि हालांकि मार्क्स का पूँजीवाद का विश्लेषण सच है,इसकी राजनैतिक परियोजना अव्यवहारिक है| इन आलोचनाओं के लिए आपका क्या कहना है?वह क्या है जो समाजवाद में आपके विश्वास दृढ़ रखता है?

मुझे लगता है कि मार्क्सवाद आज पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है| 1948 में प्रकाशित कम्युनिस्ट घोषणा पत्र की ओर वापस देखो:19वीं सदी के मध्य में वर्तमान दुनिया के लिए इससे ज्यादा प्रासंगिक कोई पाठ प्रकाशित नहीं हुआ| यह उस समय के पूंजीवाद की कई विशेषताओं का वर्णन करता है जो वर्तमान परिस्थितियों के लिए प्रासंगिक हैं| हमें आज मार्क्स की जरुरत है|बेशक,हमें सिर्फ दोहराना नहीं चाहिए कि मार्क्स ने अपने समय में क्या कहा था लेकिन हमें उनके स्वरूप को जारी रखना चाहिए यही वर्तमान चुनौतियों का मार्क्सवादी जवाब दे रहा है|

तृतीय विश्व मंच

क्या आप तीसरे विश्व मंच (तीसरा विश्व मंच) के बारे में बात कर सकते हैं जिसके आप लगभग 40 सालों से निदेशक रहे हैं?आपके लक्ष्य और प्राथमिकता क्या हैं?

तीसरा विश्व मंच एक अंतर्राष्ट्रीय स्वतंत्र संघ है| अपने मेजबान देश जहाँ इसका मुख्यालय है (डकार,सेनेगल) द्वारा मान्यता प्राप्त है| यह 1975 में स्थापित हुआ,यह अपनी तरह का सबसे पुराना अंतर्राष्ट्रीय स्वतंत्र संगठन है| यह बदलते विश्व के साथ तालमेल बिठाने में सफल रहा है और प्रतीत होता है कि यह अपना प्रभाव बढाने में भी सफल रहा है|

तीसरा विश्व मंच न केवल विभिन्न संभावित विकास के विकल्पों पर वाद विवाद को आगे बढ़ाने और विस्तार देने वाले संबंधित प्रतिबद्ध बौद्धिकों को इकट्ठा करता है (सभी आर्थिक,सामाजिक,राजनैतिक और सांस्कृतिक आयामों में स्वयं को भी मानता है) बल्कि वाद विवाद के माध्यम से समाज सम्बद्ध वास्तविक प्रभावों को भी बनाने का कार्य करता है|

तीसरा विश्व मंच पूरे एशिया अफ्रीका महाद्वीप के और लैटिन अमरीका के लोगों को लामबंद करता है इसमें लगभग 1000 व्यक्तित्वों में जाने माने नाम हैं जो आमतौर पर रचनात्मक सोच के साथ जुड़े है और मुद्दों का विश्लेषण और उनकी व्यापक पड़ताल करने में सक्षम हैं, साथ ही साथ ऐसे पुरुष और महिलायें हैं जिन्होंने नीति निर्माण में या तो विशेषज्ञ के रूप में और या शीर्ष नौकरों या विचारों के नेतृत्वकर्ता के रूप में और सामाजिक आन्दोलनों में अपनी क्षमता को सिद्ध किया है|

तीसरा विश्व मंच 25 वर्षों के लिए सक्रिय है,तब से तीनों महाद्वीप के बौद्धिकों के लिए जो "विकास की चुनौतियों" के विभिन्न पक्षों पर लोक सम्बद्ध विमर्श में शामिल हैं,उनके लिए एक नेटवर्क की तरह कार्य कर रहा है| चूँकि यह "विकास" प्रगतिशील सामाजिक परिप्रेक्ष्य की अनिवार्यता के आधार पर परिभाषित किया गया है (जनता के लाभ के लिए विकास) विशेषकर लोगों और सम्बद्ध राष्ट्र के लिए आन्तरिक सामाजिक परिवर्तनों और वैश्विक व्यवस्था में प्रचलित प्रवृत्तियों के बीच के आपसी संबंधों की दृष्टि में, तीसरा विश्व मंच समाज के विभिन्न आयामों (राजनैतिक लोकतंत्र की प्रगति,सामाजिक अधिकार,जेंडर के मुद्दे आदि) में लोकतांत्रीकरण को तेजी से बढ़ा सकता है| इन वाद विवादों का सम्बन्ध माइक्रो अर्थशास्त्र की रणनीतियों से है,माइक्रो अर्थशास्त्र प्रबंधन के रूपों,आर्थिक शक्तियों का विश्लेषण,समाज की संकल्पना और सामाजिक आर्थिक आन्दोलनों से हैं,अन्य शब्दों में कहें तो सामाजिक जीवन

के सभी पक्षों से है,इसमें उन्होंने विश्व व्यवस्था से संबंधित सभी बड़े मुद्दों को शामिल किया है (विश्व अर्थव्यवस्था,उत्तर दक्षिण संबंध,पर्यावरण की समस्याएं और उससे संबंधित राष्ट्रीय और क्षेत्रीय सुरक्षा और भू रणनीतिक आदि)

सकारात्मक रूप से तीसरे विश्व मंच का उद्देश्य ठोस विकल्पों की पहचान करना और विभिन्न क्षेत्रों जिनमें उसने शोध कराया है उनमें नीतियों की सिफारिशों को तैयार करना है| उन विकल्पों और नीतिगत सिफारिशों को, शोधकर्ताओं की टीम जिन्होंने समस्या का अध्ययन पृथक होकर किया है,उसका उत्पाद नहीं होना चाहिए बल्कि उत्पाद "सिद्धांत और व्यवहार" के बीच बातचीत का परिणाम होना चाहिए| जहाँ एक ओर समस्याओं और चुनौतियों का वैज्ञानिक विश्लेषण किया गया हो तो दूसरी ओर वास्तविक सामाजिक आंदोलन के लक्ष्य और कार्य हों| इसी मूल भावना के साथ तीसरा विश्व मंच जोड़ने वाले नेटवर्क की तरह संचालित होता है,जहाँ एक तरफ नागरिक समाज संगठन हैं तो दूसरी तरफ विचारों के केंद्र हैं, विचार के ऐसे केंद्र जहाँ वैज्ञानिक रूप से सुसज्जित विचारक, आन्दोलनों से तैयार स्पष्ट मांगों के फलस्वरूप अपने शोध को कर रहे हैं|

तीसरे विश्व मंच के लिए यह विकल्प ही बुनियाद है| यह बुनियाद इस विचार से उपजती है कि असली दुनिया शुद्ध "अकादमिक विचार" से नहीं बदलती बल्कि मूलतः सामाजिक नायकों की गतिविधियों से बदलती है| लेकिन साथ ही वह मानता है कि उन नायकों की गतिविधियों दुनिया बदलेगी जो चुनौतियों को विश्लेषित करने में बौद्धिक रूप से लैस हैं,जो कार्य और नीति सिफारिशों के लिए जरुरत विकल्पों के लक्ष्य निर्धारण की दिशा में आगे बढ़ने के दृष्टिकोण से अधिक व्यवहारिक,संभावित और दक्ष हैं|